महिलाओं के खिलाफ हिंसा और समझौते की हकीकत: सहजनी शिक्षा केंद्र के मामलों का विश्लेषण

सहजनी शिक्षा केन्द्र

Cehat

के क्षमता निर्माण सहयोग से

परिचय

समझौता शब्द हम रोज़मर्रा की ज़िंदगी में बहुत सुनते हैं। आम तौर पर लोग समझते हैं कि समझौता मतलब हार मान लेना या चुप हो जाना। लेकिन असल में समझौता हमेशा इतना सीधा नहीं होता। कई बार समझौता परिस्थितियों के बीच जीने का तरीका होता है। यह एक ऐसा फैसला हो सकता है, जो व्यक्ति अपनी मजबूरी, ज़िम्मेदारियों और भविष्य को देखते हुए लेता है।

परिवार और खासकर शादीशुदा जीवन में समझौता अक्सर महिलाओं से जोड़ा जाता है। समाज में यह उम्मीद की जाती है कि महिला घर को बचाए, रिश्तों को संभाले और किसी भी तरह परिवार को टूटने से रोके। अगर घर में झगड़ा या हिंसा हो, तो भी सबसे पहले महिला से ही कहा जाता है कि "थोड़ा सह लो", "बच्चों के लिए निभा लो", या "समाज क्या कहेगा"। ऐसे में समझौता सिर्फ दो लोगों के बीच का निर्णय नहीं रहता, बल्कि उस पर समाज, रिश्तेदारों और आर्थिक स्थिति का भी असर होता है। घरेलू हिंसा के मामलों में समझौता एक जटिल विषय है। बाहर से देखने पर लगता है कि अगर किसी महिला के साथ हिंसा हो रही है, तो उसे तुरंत घर छोड़ देना चाहिए।

लेकिन हकीकत में यह फैसला आसान नहीं होता। कई महिलाओं के पास अपनी कमाई का साधन नहीं होता। बच्चों की जिम्मेदारी होती है। मायके का सहारा कमजोर होता है। समाज का डर और बदनामी का खतरा अलग होता है। इन सब कारणों से कुछ महिलाएँ घर में ही रहकर स्थिति को बदलने की कोशिश करती हैं।

समझौता हमेशा डर या कमजोरी की निशानी नहीं होता। कई बार यह जीने की रणनीति होती है। कुछ महिलाएँ घर में रहते हुए आर्थिक रूप से मजबूत बनने की कोशिश करती हैं, नौकरी या छोटा काम शुरू करती हैं, बच्चों की पढ़ाई पर ध्यान देती हैं और धीरे-धीरे अपनी स्थिति बेहतर बनाती हैं। उनके लिए समझौता एक अस्थायी कदम हो सकता है, ताकि वे सही समय पर अपने लिए बेहतर निर्णय ले सकें। यह भी समझना जरूरी है कि हर महिला की परिस्थिति अलग होती है। किसी के लिए घर छोड़ना सही फैसला हो सकता है, तो किसी के लिए घर में रहकर अपनी जगह मजबूत करना। इसलिए समझौते को केवल "सही" या "गलत" के पैमाने पर नहीं परखा जा सकता। इसे उस महिला की नज़र से देखना जरूरी है, जो उस स्थिति में जी रही है। अंत में, समझौता केवल चुप रहना नहीं है। यह कई बार जीवन को संभालने, रिश्तों को बचाने या समय जीतने की कोशिश भी हो सकता है।

सबसे जरूरी बात यह है कि महिला की सुरक्षा, सम्मान और अधिकार को केंद्र में रखा जाए।

इस विश्लेषण के माध्यम से हम यह समझने की कोशिश कर रहे हैं कि महिलाओं के खिलाफ हिंसा के मामलों में किन परिस्थितियों में समझौता हो जाता है। यह सहजनी शिक्षा केंद्र (SSK) के पास दर्ज मामलों के आँकड़ों पर आधारित है। इन आँकड़ों के माध्यम से यह देखने की कोशिश की गई है कि महिलाएँ किस प्रकार की हिंसा झेल रही थीं, हिंसा किसने की, उन्होंने क्या कदम उठाए और अंत में मामला किस तरह सुलझा।

सहजनी शिक्षा केंद्र (एसएसके) एक सामाजिक संस्था है जो उत्तर प्रदेश के ललितपुर जिले में काम करती है। यह संस्था खासकर ग्रामीण क्षेत्रों की महिलाओं और किशोरियों के साथ काम करती है। इसका मुख्य उद्देश्य महिलाओं को पढ़ाई, जानकारी और अधिकारों के बारे में जागरूक बनाकर उन्हें मजबूत करना है।

एसएसके की शुरुआत महिलाओं की साक्षरता से हुई थी। संस्था ने गाँव-गाँव में पढ़ने-लिखने के केंद्र चलाए, जहाँ महिलाएँ और लड़कियाँ बुनियादी शिक्षा हासिल कर सकें। समय के साथ एसएसके ने अपने काम का दायरा बढ़ाया और अब यह महिलाओं के अधिकार, घरेलू हिंसा, बाल विवाह, सरकारी योजनाओं की जानकारी और सामाजिक न्याय जैसे मुद्दों पर भी काम करती है।

संस्था का मानना है कि शिक्षा केवल पढ़ना-लिखना नहीं है, बल्कि अपने अधिकारों को समझना और अपने लिए आवाज उठाना भी है। इसलिए एसएसके महिलाओं को कानूनी जानकारी, सामाजिक सहयोग और मार्गदर्शन भी देती है।

अध्ययन के परिणाम

यह विश्लेषण सहजनी शिक्षा केंद्र की टीम द्वारा दर्ज किए गए 139 महिलाओं के खिलाफ हिंसा के मामलों पर आधारित है। ये वे मामले हैं जिनमें एसएसके ने वर्ष 2018 से 2025 के बीच हस्तक्षेप किया और महिलाओं को सहयोग दिया।

1. हिंसा के प्रकार

60% मामले घरेलू हिंसा के थे और 23.6% मामले हत्या से जुड़े थे। 7.9% मामले यौन हिंसा के, 3.6% मामले आत्महत्या और 1.4% मामले आत्महत्या के लिए मजबूर करने से जुड़े थे। यहाँ यह समझना जरूरी है कि आत्महत्या और आत्महत्या के लिए मजबूर करने वाले मामले भी हिंसा से ही जुड़े हुए थे।

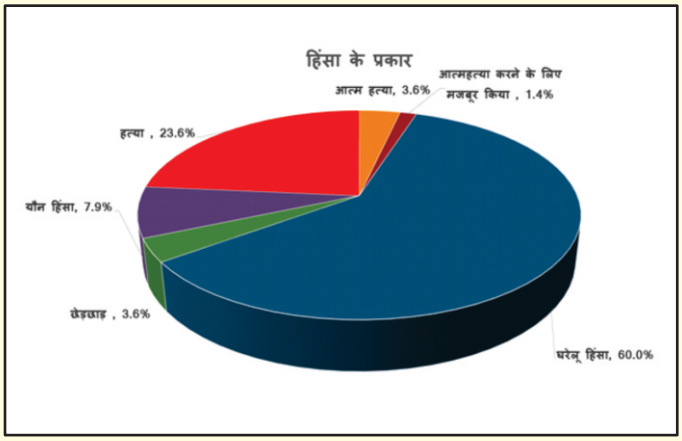

2. महिलाओं की प्रोफ़ाइल

इन मामलों में अधिकतर महिलाएँ युवा आयु की थीं। सबसे अधिक महिलाएँ 18 से 22 वर्ष (25%) और 28 से 32 वर्ष (22.1%) आयु वर्ग की थीं। 7.14% मामले 18 वर्ष से कम आयु की लड़कियों के थे। इसमें 90% महिलाएँ विवाहित थीं और केवल 10% अविवाहित थीं।

29.3% महिलाएँ निरक्षर थीं और 30.7% केवल 8वीं तक पढ़ी थीं। ज़्यादातर मामले सामाजिक रूप से कमजोर वर्ग की महिलाओं के थे। अनुसूचित जाति की महिलाएँ 52.1% थीं और पिछड़ी जाति की महिलाएँ 31.4% थीं। इसका एक कारण यह भी है कि सहजनी शिक्षा केंद्र का काम मुख्य रूप से सामाजिक और आर्थिक रूप से कमजोर समुदायों के साथ है। इसलिए इन वर्गों की महिलाएँ ही अधिक संख्या में सहायता के लिए आगे आती हैं।

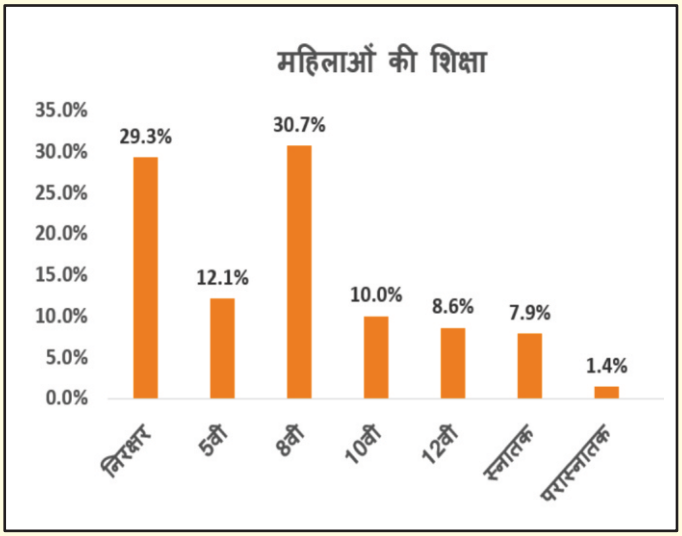

3. हिंसा का विवरण

आत्महत्या के मामलों में, 20% में पति, 20% में पिता, 20% में भाई, 20% में समुदाय और 20% में ससुराल पक्ष शामिल थे। आत्महत्या के लिए मजबूर करने के मामलों में 50% में पति और 50% में ससुराल पक्ष शामिल था। इससे साफ है कि ये मामले पारिवारिक दबाव से जुड़े थे।

घरेलू हिंसा के मामलों में 71.4% में पति मुख्य आरोपी थे और 23.8% में ससुराल पक्ष शामिल था। लगभग 2.4% मामलों में पिता और 2.4% में बहू-बेटा शामिल थे।

छेड़छाड़ के मामलों में 40% में अनजान व्यक्ति और 40% में पिता शामिल थे, जबकि 20% मामलों में ससुराल पक्ष का नाम आया।

यौन हिंसा के मामलों में 36.4% में पड़ोसी, 18.2% में अनजान व्यक्ति, 18.2% में रिश्तेदार और 18.2% में समुदाय के लोग शामिल थे। 9.1% मामलों में पिता का नाम भी आया। इससे पता चलता है कि यौन हिंसा के आरोपी अधिकतर जान-पहचान के लोग थे, हालांकि कुछ मामलों में अनजान व्यक्ति भी शामिल थे।

हत्या के मामलों में 66.7% में पति आरोपी थे और 27.3% मामलों में ससुराल पक्ष शामिल था। 3.03% मामलों में पड़ोसी और 3.0% में बहू-बेटा शामिल थे।

कुल मिलाकर, आँकड़े यह दिखाते हैं कि 60% मामलों में पति मुख्य आरोपी थे और 22.9% मामलों में ससुराल पक्ष शामिल था।

महिलाओं ने कई तरह की हिंसा एक साथ सहन की। 91.4% मामलों में मानसिक हिंसा थी, 83.6% मामलों में शारीरिक हिंसा थी, 48.6% मामलों में आर्थिक हिंसा थी और 22.4% मामलों में यौन हिंसा थी। इससे पता चलता है कि कई महिलाओं को एक से अधिक प्रकार की हिंसा का सामना करना पड़ा। करीब 11 घरेलू हिंसा के मामलों में महिलाओं ने यह बताया कि उनके पति ने उनके साथ यौन हिंसा भी की। लगभग 39% मामलों में हिंसा 16 साल या उससे अधिक समय से चल रही थी। कुछ मामलों में 3 से 10 साल तक भी हिंसा जारी रही। इससे पता चलता है कि महिलाएँ लंबे समय तक हिंसा सहती रहती हैं।

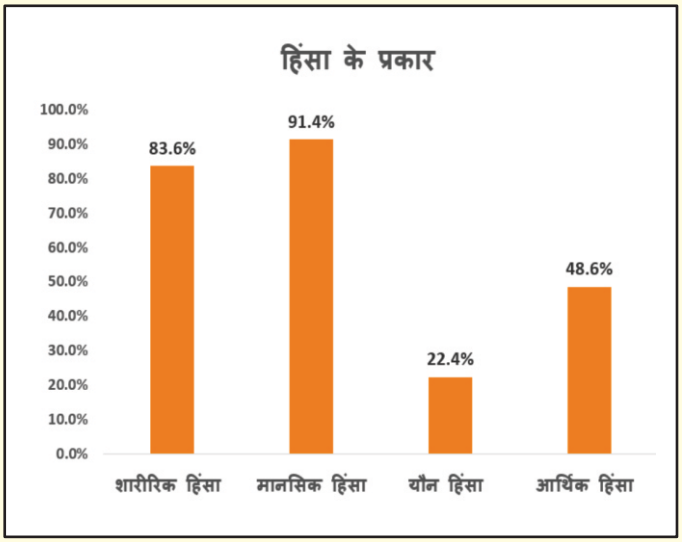

60% महिलाओं ने एसएसके के पास आने से पहले किसी भी तरह की कानूनी कार्रवाई नहीं की थी। केवल लगभग 33% मामलों में पुलिस रिपोर्ट दर्ज की गई थी और करीब 4% मामलों में कोर्ट में केस दायर किया गया था। इससे यह भी पता चलता है कि हत्या और यौन हिंसा जैसे गंभीर मामलों में भी कई बार कानूनी कार्रवाई नहीं हो पाती। महिलाएँ या तो डर, दबाव या पारिवारिक कारणों से पुलिस या कोर्ट तक नहीं पहुँच पातीं।

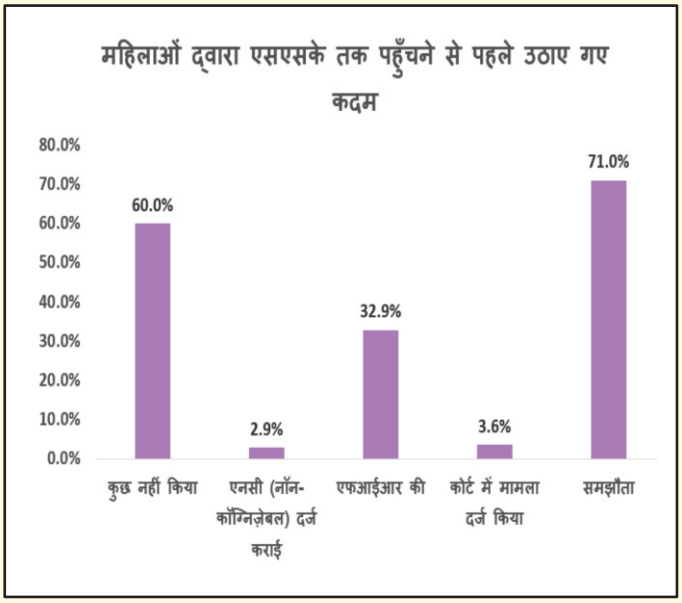

4. महिलाओं की एसएसके से अपेक्षाएँ

आत्महत्या के मामलों में 40% महिलाओं के परिवार की अपेक्षा एसएसके से न्याय की थी और 40% की अपेक्षा थी कि हिंसा बंद हो। 20% मामलों में संपत्ति के अधिकार को लेकर अपेक्षा थी। आत्महत्या के लिए मजबूर करने के मामलों में 100% महिलाओं के परिवारों की अपेक्षा न्याय की थी। इन मामलों में परिवार चाहता था कि दोषियों के खिलाफ उचित कार्रवाई हो और महिला को न्याय मिले।

घरेलू हिंसा के मामलों में 52.4% महिलाओं की मुख्य मांग थी कि हिंसा बंद हो। 10.7% ने बच्चों के अधिकार और संपत्ति में अधिकार की बात की। 9.5% ने भरण-पोषण, 7.1% ने संयुक्त बैठक और 4.8% ने न्याय की मांग की। इससे पता चलता है कि घरेलू हिंसा में महिलाएँ पहले हिंसा रुकवाना चाहती हैं। छेड़छाड़ के मामलों में 40% ने न्याय की मांग की। 20% ने संयुक्त बैठक, 20% ने सामाजिक जरूरत और 20% ने हिंसा बंद करने की बात कही। यौन हिंसा के मामलों में 90.9% महिलाओं ने न्याय की मांग की, जबकि 9.09% मामलों में समझौते की बात सामने आई। हत्या के मामलों में 63.6% ने न्याय की मांग की। 21.2% ने सामाजिक जरूरतों की बात की। 6.1% ने समझौते और 3.0% ने बच्चों के अधिकार की बात कही।

5. एसएसके की पहल के बाद मामले की स्थिति

एसएसके की पहल के बाद 47.1% मामलों में सामाजिक समझौता हो गया। इन मामलों में पीड़िता के परिवार और आरोपी पक्ष के बीच पैसे या जमीन के रूप में लेन-देन हुआ।

31.2% महिलाएँ ठीक से ससुराल में रह रही थीं। इन मामलों में सहजनी शिक्षा केंद्र एसएसके ने महिला, उसके पति और परिवार के सदस्यों के साथ एक संयुक्त बैठक करवाई। इस बैठक में कुछ शर्तों और बातों पर सहमति बनाई गई, ताकि महिला बिना हिंसा के सुरक्षित और सम्मान के साथ अपने घर में रह सके।

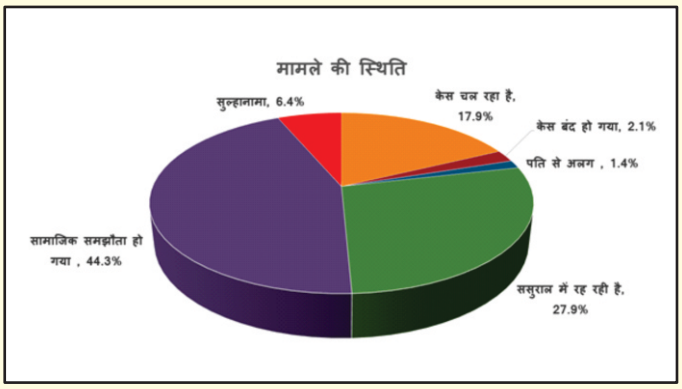

18.1% मामलों में केस अभी भी चल रहा है, यानी प्रक्रिया जारी है। केवल 1.5% महिलाएँ पति से अलग हुईं। आत्महत्या के मामलों में 60% में सामाजिक समझौता हुआ। घरेलू हिंसा के 29.3% मामलों में सामाजिक समझौता हुआ। छेड़छाड़ के मामलों में 60% और यौन हिंसा के मामलों में 63.6% मामलों में सामाजिक समझौता हुआ। हत्या के मामलों में तो 84.9% मामलों में सामाजिक समझौता हुआ। इससे पता चलता है कि कई गंभीर मामलों में भी लेन-देन के आधार पर सामाजिक समझौता किया गया।

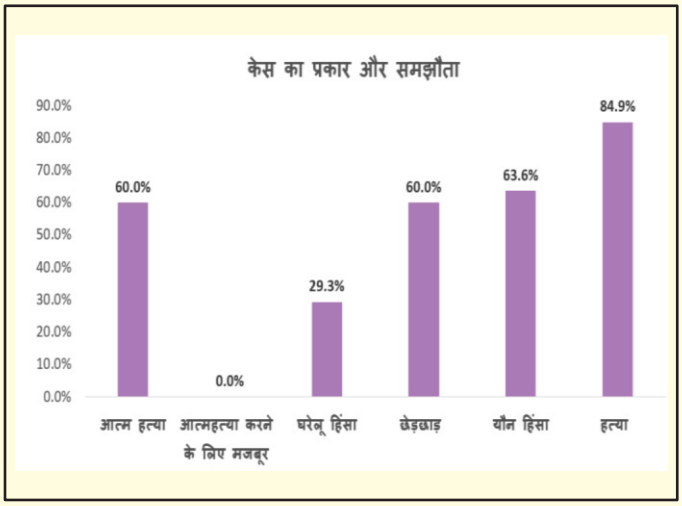

समझौता - एक केस स्टडी

संगिता उत्तर प्रदेश के चित्रकूट जिले की एक महिला थी। वह विवाहित थी और उसका पति विजय (नाम बदला हुआ) बांदा जिले का रहने वाला था। उसके ससुराल वाले कुछ समय से दहेज के लिए परेशान कर रहे थे। एक दिन उसके ससुराल वालों ने उसे मार दिया और ऐसा दिखाया कि उसने खुदकुशी की है। इस घटना के बारे में बाद में पता चला कि यह आत्महत्या नहीं बल्कि हत्या थी।

जब यह मामला सामने आया, तो लोग पहले समझौता करना चाहते थे यानी परिवार और आरोपी पक्ष पैसे लेकर मामला बंद कर देना चाहते थे। लेकिन एसएसके केसवर्कर ने संगिता के पिता और भाई से बात की। उन्होंने पूछा कि क्या वे न्याय चाहते हैं या समझौता करना चाहते हैं। पिता ने कहा कि वह अपनी बेटी की मौत का बदला चाहते हैं और सभी दोषियों को जेल भेजना चाहते हैं।

केसवर्कर ने संगिता के पिता और भाई को पुलिस स्टेशन लेकर गई और एफआईआर दर्ज कराने की कोशिश शुरू की। पुलिस पहले रिपोर्ट दर्ज करने से हिचक रही थी और समझौते की बात कर रही थी। केसवर्कर ने हार नहीं मानी और अंत में अदालत की मदद से रिपोर्ट दर्ज करवाई।

पुलिस और सिस्टम ने कई बार मुश्किलें डालीं। कभी पुलिस अधिकारी ने कहा कि मामला "आत्महत्या" के रूप में दर्ज करें, तो कभी आरोपी पक्ष केसवर्कर को नसीहत देता था। इतनी तकलीफ के बावजूद केसवर्कर, संगीता के पिता और भाई अदालत पहुंचने तक लड़ते रहे।

आदालत में सुनवाई के दौरान संगिता के पिता को उसके ससुराल वाले धमकाते भी थे। उसके भाई को जान से मारने की धमकी मिली और उसे गांव छोड़ कर भागना पड़ा। पर संगिता के पिता ने हार नहीं मानी और कोर्ट तक लड़ते रहे।

बाद में हाई कोर्ट ने उन पर लगाए झूठे चार्जेज को ख़ारिज कर दिया। केस अभी भी चल रहा है और संगिता के पति और उसके बड़े भाई को गिरफ्तार भी किया गया है।

इस पूरी कहानी से यह बताया गया है कि घरेलू हिंसा या हत्या जैसे गंभीर मामलों में भी समझौता करना आसान माना जाता है, लेकिन अगर परिवार सच्चा न्याय चाहता है, तो उन्हें कठिन रास्ता चुनना पड़ता है- पुलिस, कोर्ट और सिस्टम के बीच लगातार लड़ना पड़ता है।

निष्कर्ष

इस पूरे अध्ययन को देखने के बाद सबसे जरूरी बात जो सामने आती है, वह यह है कि महिलाओं के मामलों में "समझौता" एक बहुत बड़ा और अहम हिस्सा है। एसएसके की पहल के बाद 47.1% मामलों में सामाजिक समझौता हुआ। यानी लगभग आधे मामलों में परिवारों के बीच बात करके, कुछ शर्तों पर सहमति बनाकर और पैसे का लेन-देन करके मामला सुलझाया गया।

यह समझना जरूरी है कि समझौता हर बार एक जैसा नहीं होता। कुछ मामलों में समझौता इसलिए हुआ क्योंकि महिला अपने घर में ही रहकर सुरक्षित जीवन चाहती थी। घरेलू हिंसा के मामलों में अधिकतर महिलाओं की पहली इच्छा यही थी कि हिंसा बंद हो जाए। वे घर तोड़ना नहीं चाहती थीं, बल्कि घर के अंदर सम्मान और शांति चाहती थीं। ऐसे मामलों में एसएसके ने महिला, पति और परिवार के साथ बैठक करवाई और कुछ शर्तों पर सहमति बनाई। 31.3% महिलाएँ बाद में ससुराल में ठीक से रह रही थीं। इससे पता चलता है कि कुछ मामलों में बातचीत से स्थिति सुधरी।

लेकिन दूसरी तरफ, यह भी सच है कि हत्या और यौन हिंसा जैसे गंभीर मामलों में भी समझौता हुआ। कई जगह पैसे या जमीन के लेन-देन के आधार पर मामला खत्म किया गया। यह बात चिंता की है। ऐसे मामलों में यह सवाल उठता है कि क्या समझौते से सही न्याय मिला या नहीं।

यह एक महत्वपूर्ण सवाल खड़ा करता है-क्या एक महिला की जान की कीमत केवल 2 से 5 लाख रुपये है? जब इतने गंभीर मामलों में भी पैसे के लेन-देन से समझौता हो जाता है, तो यह समाज और न्याय की प्रक्रिया दोनों पर सवाल उठाता है।

समझौता होने के पीछे कई कारण होते हैं। सबसे बड़ा कारण है परिवार और समाज का दबाव। अक्सर कहा जाता है कि "इज्जत का सवाल है", "बच्चों का भविष्य देखो", या "कोर्ट-कचहरी में मत पड़ो"। ऐसे माहौल में परिवार जल्दी फैसला करना चाहता है।

कानूनी प्रक्रिया लंबी और खर्चीली होती है। पुलिस का रवैया भी कई बार सहायक नहीं होता। इसलिए कई परिवार समझौते को आसान रास्ता मान लेते हैं।

आर्थिक कारण भी बहुत महत्वपूर्ण हैं। जिन महिलाओं के मामले सामने आए, उनमें बड़ी संख्या सामाजिक और आर्थिक रूप से कमजोर वर्गों की थी। अगर महिला खुद कमाने वाली नहीं है, तो उसके लिए घर छोड़ना बहुत कठिन होता है। बच्चों की जिम्मेदारी भी होती है। ऐसे में वह सोचती है कि अगर पति का व्यवहार बदल जाए तो घर बच सकता है। इसलिए वह समझौते के लिए तैयार हो जाती है।

लेकिन यह भी जरूरी है कि समझौता महिला की इच्छा से हो, न कि दबाव में। कई बार महिला खुलकर अपनी बात नहीं कह पाती। परिवार या समाज के दबाव में वह चुप हो जाती है। इसलिए संस्था की जिम्मेदारी है कि वह महिला से अलग से बात करे और यह समझे कि वह सच में क्या चाहती है।

कुछ मामलों में, समझौता महिला की अपनी रणनीति भी हो सकती है। वह समय लेना चाहती है, बच्चों को बड़ा करना चाहती है या खुद को मजबूत बनाना चाहती है। ऐसे में वह तुरंत अलग होने के बजाय घर में रहकर अपनी स्थिति सुधारने की कोशिश करती है। यह उसका सोचा-समझा फैसला हो सकता है।

फिर भी, यह ध्यान रखना जरूरी है कि समझौता हिंसा को सही ठहराने का तरीका न बन जाए। अगर हिंसा दोबारा शुरू हो जाती है, तो समझौते का कोई मतलब नहीं रह जाता। इसलिए समझौते के बाद निगरानी और सहयोग भी जरूरी है।

इस अध्ययन से यह भी साफ है कि कई महिलाएँ कानूनी रास्ते तक पहुँच ही नहीं पातीं। 60% महिलाओं ने एसएसके के पास आने से पहले कोई कानूनी कदम नहीं उठाया था। इसका मतलब है कि डर, शर्म, बदनामी और खर्च जैसे कारण उन्हें रोकते हैं। ऐसे में सामाजिक संस्था का सहयोग बहुत जरूरी हो जाता है। अंत में यही कहा जा सकता है कि समझौता न तो पूरी तरह सही है और न ही पूरी तरह गलत। यह परिस्थितियों पर निर्भर करता है। अगर समझौते से महिला की सुरक्षा, सम्मान और अधिकार सुरक्षित रहते हैं, तो वह एक सही कदम हो सकता है। लेकिन अगर समझौता केवल मामला दबाने या लेन-देन के लिए किया गया है, तो वह न्याय का स्थान नहीं ले सकता। सबसे जरूरी बात यह है कि हर फैसले में महिला की आवाज सबसे ऊपर हो। उसे पूरी जानकारी दी जाए, उसके सामने सभी विकल्प रखे जाएँ और वह बिना डर के निर्णय ले सके।

जब तक महिला मजबूत नहीं होगी और समाज की सोच नहीं बदलेगी, तब तक समझौता कई बार मजबूरी बना रहेगा। इसलिए आगे की दिशा यह होनी चाहिए कि समझौता तभी किया जाए जब वह सच में महिला के हित में हो। महिला की सुरक्षा, सम्मान और अधिकार से कभी भी समझौता नहीं होना चाहिए। यही इस पूरे अध्ययन का सबसे बड़ा निष्कर्ष है।

महरोनी ललितपुर
उ० प्र०